P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 VOL-4* ISSUE-8* April- 2017
E: ISSN NO.: 2349-980X **Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika**

सांस्कृतिक राष्ट्रवाद और हिन्दी साहित्य

विजयता कुमारी राम
अतिथि प्रवक्ता,
हिन्दी विभाग,
डोरण्डा कॉलेज,
राँची

सारांश

भारत बहुसांस्कृतिक, बहुभाषिक देश है। यहाँ विपुल मात्रा में साहित्य रचा जाता है हमारा साहित्य हमारी बहुसंस्कृति का ही धोतक है। विशेष रूप से हिंदी साहित्य हमारी बहुसंस्कृति के साथ देश के प्रतिनिधि–साहित्य के रूप में उपस्थित हुआ है। विविधताओं का देश होने के बावजूद, भारतीय जीवन के इंद्रधनुषी वैविध्य के बावजूद भारत वर्ष सांस्कृतिक मूल्यों और सभ्यता की दृष्टि से ऐतिहासिक महत्व रखता है। भारतीय संस्कृति का मूल वसुधा को एक कुटुंब मानते है। इस भावना ने सांस्कृतिक राष्ट्रवाद के माध्यम से भारत में सामाजिक समानता की भावना को जगा कर देश के प्रत्येक निवासी को एक सूत्र में बॉधा है। जिससे आज हमारा देश एक विकसित देश बनकर अन्तराष्ट्रीय मंच पर सम्मान पा रहा है।

मुख्य शब्द : संस्कृति, अस्मिता, राष्ट्रीय, भूमंडलीकरण, भारतीय समाज

प्रस्तावना

सभ्यता का आन्तरिक प्रभाव संस्कृति है, संस्कृति मनुष्य के भूत वर्तमान और भावी जीवन का सर्वांग निरूपण करती है। हमारे जीवन शैली का अभिन्न अंग है संस्कृति। सभ्यता समाज की बाह्य व्यवस्थाओं का नाम है तो संस्कृति व्यक्ति के विकाश का। भाषा संस्कृति की वाहिका है यही कारण है कि साहित्य में संस्कृति की गहरी झलक मिलती है। मैडलवान के कथन का सार भी यह है कि 'प्रत्येक संस्कृति का सार तत्व उसकी भाषा में अभिव्यक्ति पा सकता। भाषा के बिना यदि संस्कृति सर्मथहीन है तो संस्कृति के आभाव में भाषा अंधी। संस्कृति के पूरक तत्व भाषा के साथ–साथ देश के रहन–सहन, आचार–विचार, रीति–रिवाज, ज्ञान–विज्ञान, परम्परागत अनुभव, कला–प्रेम, जीवन यापन के ढ़ंग और रूची आदि का बोध होती है। भारतीय संस्कृति की सबसे विशिष्टता यह है कि इसकी विचार धारा में भौतिक और आध्यात्मिक दोनों चिन्तन का समावेश है। भारतीय संस्कृति विश्व की एक प्राचीनतम संस्कृति है जिसकी आभा विभिन्न संघर्षों से गुजरने तथा हजारों वर्षों की यात्रा करने के बावजूद धूमिल नहीं हुई है। मुहम्मद इकबाल की यह युक्तियाँ भारतीय संस्कृति के लिए सार्थक प्रतीत होती हैः–

कुछ बात है कि हस्ती मिटती नहीं हमारी।
सदियों रहा है दुश्मन दौरें जमां हमारा।।

भारतीय संस्कृति का मूलमंत्र उसकी उदारता, सहिष्णुता और समस्त वसुधा को एक कुटुंब मानने मे है। भारतीय संस्कृति गिरि शिखरों की भाँति उदात्त, गंगा की भॉति निरंतर प्रवहमान, समुद्र की तरह विशाल है। वह विधा–अविधा, श्रेय–प्रेय, अभ्युदय, निःश्रेयस, धावा–पृथ्वी सभी को आत्मसात करती हुई विश्व को ज्योतिर्मय करती आ रही है। ऋग्वेद का यह आभार संदेश ''आ नो भद्रा, कृत्वो यंतु विश्वतः'' अर्थात प्रत्येक दिशा से शुभ एवं सुंदर विचार हमें प्राप्त हों, यही इसकी महानता का प्रमाण है। हिंदी भाषा और साहित्य का समग्र इतिहास हमारी समन्वित संस्कृति का इतिहास है। हमारे देश में सांस्कृतिक समन्वय के समय–समय पर जो प्रयास होते रहे, उनमें हिंदी भाषा का विशेष योगदान रहा है। संस्कृति की वाहिका हिन्दी भाषा ने ही 'राष्ट्रवाद' को भारतीय संस्कृति की एक महत्वपुर्ण विशेषता बना कर अभिव्यक्ति दी। राष्ट्रवाद शब्द 'राष्ट्रीयता' को अपने में समाहित किये हुए है। राष्ट्रीयता देश–प्रेम का यह प्रबल भावना है जो देश हित के लिए प्राणों का उत्सर्ग स्वेच्छा से करने का भाव हृदय में जागृत करती है। राष्ट्रीयता को परिभाषित करते हुए अमरकान्त लिखते है – ''राष्ट्रीयता उस भावना विशेष का नाम है, जिसके कारण कोई व्यक्ति या समुदाय पारस्परिक एकता की भावना का अनुभव करता है। वह श्रद्धा और निष्ठा पर आधारित एक ऐसा आदर्श है, जिसका केन्द्र राष्ट्र होता है, वह एक ऐसी मनोदशा है जिससे व्यक्ति अपनी राष्ट्रीयता एवं राज्य के प्रति उच्चतर

भक्ति–भावना का अनुभव करता है।''[1] संस्कृति और राष्ट्रवाद के मिलन का कार्य साहित्य द्वारा ही संभव हो पाया है। ''हिन्दी भाषा और साहित्य का समग्र इतिहास हमारी समन्वित संस्कृति का इतिहास है।''[2] हिन्दी साहित्य में संस्कृति राष्ट्रवाद के मत को आरंभिक काल में सिध्दों, जैनियों, नाथों, संतों और सूफियों ने दिया। विभिन्न कालो में सांस्कृतिक राष्ट्रवाद अपना स्वरूप किस–किस तरह से बदलता हुआ आगे बढ़ा इसका ज्ञान हिन्दी साहित्य का इतिहास देता है। सांस्कृतिक राष्ट्रवाद का स्वरूप विभिन्न कालो मे भिन्न–भिन्न रहा परन्तु मूल भाषा वही रही। हिन्दी साहित्य में सांस्कृतिक राष्ट्रीयता के मुख्यत दो रूप मिलते है, एक तो विदेशी मुस्लिम आक्रमणकारियों और उनके वंषजों के अत्याचार के विरूद्ध और दूसरा ब्रिटिश शासन की प्रतिक्रिया के रूप में। हमारे प्राचीन साहित्य आदिकाल से रीतिकाल तक पहला रूप उपलब्ध होता है जबकि आधुनिक साहित्य में दूसरा।

आदिकाल में रासो ग्रथो में राष्ट्रीयता का व्यापक भाव सर्वत्र उपलब्ध नहीं होती रासो काव्यो के रचयिता राजपूती गौरव से अधिक ऊँचा नहीं उठ पाते। उनकी दृष्टि उतनी अधिक संकुचित थी कि पृथ्वीराज और गौरी के संघर्ष को भी जातीय या राष्ट्रीय संघर्ष के रूप में देख पाते। हेमचन्द के काव्य में सांस्कृतिक राष्ट्रीयता की झलक इस पंक्तियों में परिलक्षित हुई हैः–

भल्ला हुआ जु मारिया बहिणि म्हारा केंतु।
लज्जोजं तु वंयस्सि अहु जे भग्गा घर एंतु।।

पूर्व मध्यकल में भक्ति काव्य में भी हमें सांस्कृतिक राष्ट्रवाद का दर्शन होता है। सन्त (संत) साहित्य के सामाजिक एकता की भावना में राष्ट्रीयता व्यक्ति होती हैः–

कबिरा खड़ा बाजार मे, मागे सब की खैर।
ना काहू से दोस्ती, न काहू से बैर।।

तुलसी की काव्य की सांस्कृतिक राष्ट्रीयता उनके समन्वयवादी भावना में व्यक्त होती है जिसमें उन्होंन रामचरितमानस मे कहा हैः–

परहित सरिस धरम नहीं भाई।
पर पीड़ा सम नहीं अधमाई।।

उत्तर मध्यकाल में राजस्थानी कवियों के काव्य के माध्यम से भी सांस्कृतिक राष्ट्रवाद जातिय गौरव से अनुप्राणित है उस युग से समस्त हिन्दू गौरव के प्रतिनिधि एंव प्रतिक महाराणा प्रताप थे, महाराणा प्रताप के यशोगान को राष्ट्रीयता से ओत–पोत न माने किन्तु इसमे उस जातीय गौरव की व्यजना अवश्य मिलती है। भूपण ने शिवाजी और छत्रशाल जैसे वीरों का जिस उत्साह के साथ वर्णन किया है वह हिन्दू जाति के सांस्कृतिक राष्ट्रीयता कि ही एक झलक प्रस्तुत करती है।

आधुनिक साहित्य मे सांस्कृतिक राष्ट्रीयता की अभिव्यक्ति भारतेन्दु हरिशचन्द द्वारा हुई है ''राष्ट्रीय चेतना को पहले पहल भारतेन्दु हरिशचन्द ने पहचाना और हिन्दी गद्य के माध्यम से उसे अभिव्यक्ति भी दी''[3] भारतेन्दु जी अपने देशवासियों के अज्ञान, सर्कीणता आदि की धोर भर्त्सना करते हुए, भारतीयों को अपनी शक्ति को पुनः जागृत करने का प्रयास करते है। वे लिखते है–''जो लोग अपने को देश हितैशी लगते हो वह अपने सुख का होम करके अपने धन और मान का बलिदान करके कमर कस के उठो, देखा–देखी थोड़ी दिनों मे सब हो जाएगा। जब तक सौ दो सौ आदमी बदनाम न होगे, जात से बाहर न निकाले जायेंगे, दरिद्र नहीं होगें, कैद न होगे, वरंच जान से न मारे जायेने तब तक कोई देश नहीं सुधरेगा।''

भारतेन्दुयुगीन कवियों ने भारतीय जनमानस मे देशप्रेम की अलख जलाई, क्षेत्रीयता से ऊपर उठकर वे सम्पूर्ण राष्ट्र की नब्ज को टटोलने लगे। भारतेन्दु की 'विजयनी विजय वैजयन्ती, प्रेमधन की ''आनन्द अरूणोदय'', प्रताप नारायण मिश्र की 'महापर्व' और 'नया संवत्', राधाकृष्ण दास की 'भारत बारहमासा' विनय शोषक कविताएँ देशप्रेम था देशभक्ति की प्रेरणा से युक्त है प्रेमधन ने 'हार्दिक हषादर्श' कविता में इस स्वार्थपूर्ण शासन प्रकिया के लिए थी ईस्ट इण्डिया कम्पनी को दोषी ठहराया है। राधाचरण गोस्वामी की कविता 'हमारो उत्तम भारत देश' एवं राधाकृष्ण दास की कविता 'भारत बारहमासा' आदि कविताएँ देश–प्रेम से ओत–प्रोत है। भारतेन्दु जी की कविता का एक उदाहरण जिससे अंग्रेजों द्वारा किए जा रहे शोषण का चित्र प्रस्तुत हैः–

''अंग्रेज राज सुख साज सवै सख भारी।
पै धन विदेश चलि जात यह अति रव्वारी।।''

द्विवेदीयुगीन कवियों ने अपनी रचनाओं के माध्यम से जनमानस के बीच सांस्कृतिक राष्ट्रवाद की लहर चलाई, स्वतंत्रता के प्रति जनमानस में चेतना का संचार किया, इस युग के रचनाकारों का राष्ट्रीय प्रेम भारतेन्दु युग के तरह सामयिक रूदन से नहीं जुड़ा रहा, बल्कि समस्याओं के कारणों पर विचार करने के साथ–साथ उनके लिये समाधान ढूढ़ने तक जुड़ा है। द्विवेदी युग के अनेक कवियों ने राष्ट्रीयता की भावना व्यंजित की है, जिनमें मैथलीशरण गुप्त, माखनलाल चतुर्वेदी, सुभद्रा कुमारी चौहान और सोहनलाल द्विवेदी उल्लेखनीय है। गुप्त जी की राष्ट्रीयता का मार्मिक रूप भारत–भारती में दृष्टिगोजर होता हैः–

'हम क्या थे, क्या हो गए और क्या होंगे सभी।
आओं मिलकर विचारें ये समस्याएँ सभी।

डा0 गणपतिचन्द्र गुप्त इन पंक्तियों के संदर्भ में लिखते हे–

''हम कौन थे, क्या हो गये .....आओं विचारें हम सभी' ही पाठक के हृदय मे राष्ट्रीयता का संचार कर देती है ..... गुप्त जी ने अपने काव्य ग्रंथों मे भारत में प्रायः सभी धर्म सम्प्रदायों को सहानुभूतिपूर्वक स्थान दिया है।''[4] द्विवेदी युगीन कवि कारणों की तह तक जाने के पश्चात उत्सर्ग और बलिदान के माध्यम से अपनी खोई अस्मिता को प्राप्त करने के लिए प्रेरणा का माध्यम भी रही है। गया प्रसाद शुक्ल स्नेही की कविताओं मे भी देशभक्ति की लहर दिखाई देती है–

जिसको न निज गौरव तथा निज देश का अभिमान है।,
यह नर नहीं, नरपशु निरा है और मृतक समान है।।,

छायावाद युग के राष्ट्रीय सांस्कृतिक काव्य में दो भावनाएँ पूरी शक्ति के साथ व्यक्त हुई है। एक ओर कवियों मे भारत की आन्तरिक विसंगतियों और विषमताओं को दूर करने के लिए देश वासियों का आवाहन किया और दूसरी ओर जनता को विदेशी शासन से मुक्ति पाने

के लिए स्वाधीनता संग्राम में कूद पड़ने की प्रेरणा दी। माखनलाल चतुर्वेदी, रामनरेश त्रिपाठी, बालकृष्ण शर्मा नवीन और सुभद्रा कुमारी चौहान ने केवल राष्ट्रप्रेम को ही मुखरित नहीं किया उन्होने स्वंय देश की आजादी की लड़ाई मे भाग लिया। फलस्वरूप उनकी देश प्रेम की कविताओं मे अनुभूति की सच्चाई और आवेश दिखाई देता है। छायावादी कवि माखन लाल चतुवेर्दी अपनी काव्यकृति 'फूल की चाह' के माध्यम से जो सांस्कृतिक राष्ट्रीयता का दर्शन करते है वह अनुपम हैः–

मुझे तोड़ लेना बनमाली, उस पथ पर देना फेंक।
मातृभूमि पर शीश चढ़ाने,
जाये जिस पथ पर वीर अनेक।।

जयशंकर प्रसाद की कृति 'हमारा प्यारा भारतवर्ष' में संस्कृति, सभ्यता, शौर्य, दान, धर्म सभी दृष्टियों से विश्व का गुरू कहा है। इसी गौरव के गाकर कवि ने देशवासियों मे देश–प्रेम की भावना भरने का प्रयास किया हैः–

हिमालय के आँगन में उसे प्रथम किरणों का दे उपहार।
उषा ने हस अभिनंदन किया और पहनाया हीरक हार।।

प्रगतिवादी वादी कवियों में सांस्कृतिक राष्ट्रवाद उनके साम्यवादी विचारधारा से प्रभावित है रामधारी सिंह दिनकर के 'रोटी और 'स्वाधीनता' में वे स्वतंत्रता प्रेमियों के गुणों और आदर्शों पर प्रकाश डाला हैः–

स्वतंत्रता गर्व उनका, जो नर फाँकों से प्राण गँवाते है पर।
नहीं बेच मन का प्रकाश रोटी का मोल चुकाते है।।
स्वतंत्रता गर्व उनका जिन पर संकट की धात न चलती है।
तूफानों में जिनकी मशाल कुछ और तेज हो जलती है।।

मुक्तिबोध, नागार्जुन, रामविलास शर्मा, केदारनाथ अग्रवाल आदि अनेक साहित्यकारों सांस्कृतिक राष्ट्रवाद को केन्द्र में रखते हुऐ अपनी रचनाओं के माध्यम से भारतीयों–को जागृत करने का प्रयास किया है।

आजादी मिलने के बाद से ही हमारे देश की अखंडता और भारतीय समाज की एकता को सम्प्रदायवाद, उग्रवाद, आतंकवाद, भाषावाद जैसे हथौड़े से खंडित करने की साजिश की जा रही है। क्षेत्रीयता की भावना सांस्कृतिक राष्ट्रवाद एवं एकता को नष्ट करने वाला है। क्षेत्रीयता की भावना आजादी के पहले भी हमारे यहां थी, परंतु आज की तरह उसका रूप वीभत्स न था। भूमंडलीकरण, आर्थिक उदारीकरण, बाजारवाद चंचल पूँजीवाद, उत्तर आधुनिकतावाद आदि की आँधी में सिर्फ हमारी ही नहीं विश्व के समस्त संस्कृति संपन्न देशों की संस्कृति की जड़े हिलने लगी है। लेकिन भारत की संस्कृति की जड़े इतनी मजबूत एवं गहरी है कि आज संसार के उद्धार की आषा भारतीय संस्कृति पर टिकी हुई है। ''विश्व की भावी एकता की भूमिका सामासिक संस्कृति पर टिकी हुई है। ..... ऐसा लगता है मानो विश्व की एकता को संभव बनाने के लिए प्रकृति ने भारत भूमि में एकता का प्रयोग किया है यदि भारत की सामसिक संस्कृति सत्य है, तो एक दिन विश्व संस्कृति और विश्व मानवता की कल्पना सत्य होगी।''[5] सम्पूर्ण विश्व में भारत एक ऐसा देश है जिसकी सभ्यता और संस्कृति उस समय से सर्वोत्कृष्ट है जिस समय संसार असभ्य और बर्बर जातियों से भरा था। हमारा देश ही वह देश है जिसमें सबसे पहले संसार को ज्ञान प्रकश दिया। हिन्दी के भूत वर्तमान और भविष्य के मेरी इन पंक्तियों में देख सकते हैः–

हमारी हिन्दी भाषा

सभ्य देश की, सभ्य वेश की,
भाषाओं में एक अन्यतम भाषा।
सदियों से जो, विश्वज्ञान की सहपुंजी,
है वो हमारी हिन्दी भाषा।
प्रकृति की प्रथम ध्वनि ''ऊँ'' से उपजी,
हमारी यह राष्ट्रीय भाषा।
भ्रातृत्व भावकर ज्ञानप्रकाश से,
पूरी की विश्व की अभिलाषा।
लाकर प्रकृति के समीप,
किया शिक्षा द्वारा चेतना का विकास।
मन और समाज की शुद्धि से,
आया आत्मगौरव का प्रकाश।
रसा, विवेकानंद को ज्ञात था,
निजभाषा उन्नति ही सब विकास।
भगत, बापू ने लाया, हिन्द में,
स्वंतत्रता का नव–प्रकाश।
कह था हमने राष्ट्रभाषा का,
सब मिलकर करेंगे विकास।
भूल अपनी संस्कृति हमसब,
अतिआधुनिकता में गए फांस।
तज सांस्कृतिक भाषा,
राष्ट्रनेता भी बने अंग्रेजी के गुलाम।
दुष्प्रभाव से, राष्ट्रभाषा हिन्दी
खो रही, अपना अयाम।
ऐसा नहीं, ज्ञानार्जन की अन्य
भाषाओं को मत स्वीकारों।
पर मातृभाषा हिंदी से की गयी
वादों को तो मत नकारों।
आत्मगौरवप्रदायनी भाषा के लिए,
हम सब यह करे प्रयास।
राजभाषा बनाकर हिन्दी का,
वर्तमान–भविष्य करे विकास।

उद्देश्य

सांस्कृतिक राष्ट्रवाद सदा से देश के विकास का प्रेरणा श्रोत रहा है यह वह शक्ति है जो भारत को स्वतंत्र करके विकास के पथ पर अग्रसर करने में देश वासियों जागृति भरने का काम समय–समय पर करती रही है। आज देश के प्रधानमंत्री जो युक्ति कहते है–''सबका साथ सबका विकास'' वह सांस्कृतिक राष्ट्रवाद की ही धरोहर है।

निष्कर्ष

हिंदी का विकास लगभग एक हजार वर्ष से हो रहा है। शास्त्रीय साहित्य के अतिरिक्त विज्ञान प्रोधोगिकी, कला, पत्रकारिता, व्यापार हर क्षेत्र में हिन्दी में उन्नति की है परन्तु अभी तक उस प्रतिष्ठित आसन तक नही पहुँच सकी है जिसकी वह अधिकारिणी है। हिंदी देश की सामासिक संस्कृति का प्रतिनिधित्व आरम्भ से ही करती रही है। साहित्य और समाज एक दूसरे के पूरक रहे है। 'राष्ट्रवाद' भारतीय संस्कृति की एक महत्वपूर्ण विषेषता है।

इस राष्ट्रवाद ने ही देश के स्वतंत्रता प्राप्त करवायी और अन्तराष्ट्रीय स्तर पर देश को प्रतिष्ठा के आसन पर आसीन किया है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. *डा0 अमरनाथ–हिन्दी आलोचना की पारिभाषिक शब्दावली–पृष्ठ संख्याा–30*
2. *आजकल पत्रिका–जून 2015 पृष्ठ संख्या–15*
3. *डा0 बच्चन सिंह–आधुनिक हिन्दी साहित्य का इतिहास पृष्ठ संख्या–63*
4. *गणपति चन्द्र गुप्त–साहित्यिक निबंध– पृष्ठ संख्या–590*
5. *रामधारी सिंह 'दिनकर'–एई महामानवेर, सागर तीरे, हमारा सांस्कृतिक परिवेश पृष्ठ संख्या–34*